गुलापल्ली नागेश्वर राव वगैरा

बनाम

आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य

(बी. पी. सिन्हा, पी. बी. गजेन्द्रगढ़कर और के. सुब्बा राव, जेजे।)

सड़क परिवहन-राष्ट्रीयकरण की योजना मुख्यमंत्री, यदि आपत्तियों की सुनवाई कर सकते हैं-पक्षपात का सिद्धांत-मोटर वाहन अधिनियम (1939 का IV), जैसा कि 1956 के अधिनियम 100 द्वारा संशोधित किया गया है। अध्याय IV ए, धारा 68 डी.

अपीलकर्ता आंध्र प्रदेश के कृष्णा जिले में मोटर परिवहन का व्यवसाय कर रहे थे। महाप्रबंधक राज्य परिवहन उपक्रम ने मोटर परिवहन के राष्ट्रीयकरण के लिए योजना प्रकाशित की और उक्त पर आपत्तियां आमंत्रित की गई थी। अन्य लोगों के साथ-साथ अपीलकर्ताओं ने अपनी आपत्तियां दायर कीं। परिवहन विभाग के प्रभारी सचिव ने अापत्तियां करने वालों को व्यक्तिगत रूप से सुना और राज्य परिवहन विभाग की ओर से किए गए अभ्यावेदन को सुना। मुख्यमंत्री, जो परिवहन के प्रभारी थे, ने योजना को मंजूरी देते हुए आदेश पारित किया। अपीलार्थियों ने उक्त योजना को निरस्त कराने के लिए संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय का रुख किया और इस न्यायालय ने गुल्लापल्ली नागेश्वर राव बनाम आंध्र प्रदेश सड़क परिवहन निगम के मामलें में पुर्व निर्धारित किया था कि परिवहन विभाग का प्रभारी सचिव इस आधार पर आपत्तियों को सुनने में अक्षम था कि कोई भी पक्ष अपने स्वयं के मामले में न्यायाधीश नहीं हो सकता है और योजना को मंजूरी देने वाले आदेश को रद्द कर दिया। इसके बाद सरकार द्वारा आपत्ति करने वालों को नोटिस जारी किए गए। मुख्यमंत्री ने स्वयं आपत्ति करने वालों और सड़क परिवहन निगम के प्रतिनिधियों को सुना और मूल रूप से प्रकाशित योजना को मंजूरी देने का आदेश पारित किया।

अपीलकर्ताओं ने योजना की पुष्टि करने वाले सरकार द्वारा पारित आदेश और क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण द्वारा मंजिली गाड़ी परमीट को रद्द करने वाले उत्तरवर्ती आदेशों का अपास्त कराने के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय में उत्प्रेषण रिट दायर की। उच्च न्यायालय ने याचिकाआेंं को खारिज कर दिया और अपीलकर्ताओं ने अपील की। अन्य बातों के साथ-साथ, उनकी ओर से यह तर्क दिया गया कि वही असक्षमता जो पिछले अवसर पर परिवहन विभाग के प्रभारी सचिव से जुड़ी थी वही मुख्यमंत्री से जुड़ी थी, जो परिवहन के प्रभारी थे, और उन्हें आपत्तियों को सुनने में अक्षम बना दिया।

अभि निर्धारित किया गया कि पक्षपात के सिद्धांत के दो सुस्थापित सिद्धांत हैं जो न्यायिक के साथ-साथ अर्ध-न्यायिक न्यायाधिकरण पर भी समान रूप से लागू होते थें -(1) यह कि कोई भी व्यक्ति अपने स्वयं के मामले में न्यायाधीश नहीं होगा और यह कि (2) न्याय केवल किया ही नही जाना चाहिए, बल्कि किया गया प्रतीत भी होना चाहिए। इसलिए, न्यायिक प्राधिकरण में किसी भी प्रकार का पक्षपात, चाहे वह वित्तीय हो या अन्य, किसी भी पक्षकार के पक्ष में हो या विपक्ष में, या कोई भी स्थिति जो पक्षपात का आरोप लगा सकती है, उसे न्यायाधीश के रूप में अयोग्य घोषित कर देना चाहिए।

लेकिन जब एक राज्य विधानमंडल या संसद, कानून द्वारा उपरोक्त सिद्धांतों के उल्घन में एक प्राधिकरण को अपने स्वयं के मामले में न्यायाधीश होने या किसी ऐसे विवाद का फैसला करने का अधिकार देता है जिसमें उसका आधिकारिक पूर्वाग्रह हो, अंग्रेजी संसद द्वारा पारित कानून के विपरीत, इस तरह के कानून को संविधान में निहीत मौलिक अधिकार के प्रकाश में जांच के दायरे में खड़ा होना पड़ता है।

द किंग बनाम बाथ क्षतिपूर्ति प्राधिकरण, [1925] । के. बी. 685 और द किंग बनाम लीसेस्टर जस्टिस, [1927] । के. बी. 557, पर चर्चा की गई।

हस्तगत प्रकरण में, हालांकि अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधान प्राकृतिक न्याय के उपरोक्त सिद्धांतों के किसी भी उल्लंघन को मंजूरी नहीं देता है या सरकार को अपने स्वयं अभियोग में स्वयं को एक न्यायाधीश बनने के लिए अधिकृत नहीं करता है। न ही यह कहा जा सकता है कि राज्य सरकार ने वर्तमान मामले में उपरोक्त सिद्धांतों का उल्लंघन किया है।

चूँकि अपीलकर्ताओं ने कभी भी मुख्यमंत्री अंतिम अवसर पर आपत्तियों पर मुख्यमंत्री की क्षमता पर सवाल नहीं उठाया और इस आधारा पर इस न्यायालय से निर्णय प्राप्त किया और इसलिए बंद विवाद को फिर से खोलने या एक विपरीत स्थिति लेने के लिए, इस स्तर पर उनके लिए, यह अवसर खुला नही है।

विभाग के सचिव से मुख्यमंत्री की स्थिति काफी अलग थी। जबकि सचिव विभाग का प्रमुख था और इसलिए इसका एक हिस्सा था, प्रभारी मंत्री केवल प्रारंभिक रूप से उस विभाग से संबंधित व्यवसाय के निपटान के लिए जिम्मेदार था। इसलिए यह कहना सही नहीं था कि मुख्यमंत्री अधिनियम के तहत एक वैधानिक उपक्रम के रूप में गठित विभाग के हिस्सा थे।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील संख्या 198-200/1959 तक।

फैसले और आदेश के खिलाफ अपील दिनांकित 5 मार्च 1959 की आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की रिट याचिका संख्या 1511,1512/1958 और 23/ 1959

एन. सी. चटर्जी, जी. सूर्यनारायण, के. मंगच और टी. वी. आर. टाटाचारी अपीलार्थियों की ओर से।

डी. नरसाराजू, आंध्र प्रदेश राज्य के महाधिवक्ता, डी. वेंकटप्पिया शास्त्री और टी. एम. सेन उत्तरदाताओं की ओर से।

21 अगस्त 1959 को न्यायालय का निर्णय था सुनाया गया

सुब्बा राव जे.-प्रमाणपत्रों पर ये अपीलें हैं -

हैदराबाद में आंध्र प्रदेश के उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ निर्देश देते हुए, याचिकाकर्ताओं द्वारा अनुच्छेद 226 के तहत दायर याचिकाओं को सुनाते हैं। परिवहन के राष्ट्रीयकरण की योजना की पुष्टि करने वाले आंध्र प्रदेश सरकार के आदेशों को रद्द करने के लिये रिट के लिये प्रमाण पत्र जारी करने के लिए संविधान और अपीलार्थियों के स्टेज कैरिज परमिट को रद्द करने वाले क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण के बाद के आदेश।

ये अपीलें दिनांक 5 नवंबर, 1958 इस न्यायालय द्वारा गुल्लापल्ली नागेश्वर राव बनाम आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम के मामले में पारित निर्णय का परिणाम हैं। उसमें तथ्यों को पूरी तरह से बताया गया था। केवल वर्तमान जांच से संबंधित तथ्यों को संक्षेप में दोहराना आवश्यक होगाः अपीलकर्ता आंध्रप्रदेश राज्य के कृष्णा जिले में कई वर्षों से मोटर परिवहन का व्यवसाय कर रहे थे। आंध्र प्रदेश सड़क परिवहन के राज्य परिवहन उपक्रम के महाप्रबंधक के रूप में श्री गुरु प्रसाद ने राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित की जाने वाली तारीख से उक्त राज्य में मोटर परिवहन के राष्ट्रीयकरण के लिए एक योजना प्रकाशित की। उक्त प्रस्तावित योजना पर राज्य सरकार द्वारा आपत्तियां आमंत्रित की गईं और अपीलार्थियों सहित अन्य लोगों ने अपनी आपत्तियां दायर कीं। 26 दिसंबर, 1957 को परिवहन विभाग के प्रभारी सचिव ने आपत्ति करने वालों की व्यक्तिगत सुनवाई की और राज्य परिवहन उपक्रम की ओर से किए गए अभ्यावेदनों को सुना। उनके द्वारा एकत्र की गई पूरी सामग्री को परिवहन के प्रभारी

राज्य के मुख्यमंत्री के समक्ष रखा गया, जिन्होंने इसे मंजूरी देने का आदेश दिया। अनुमोदित योजना आंध्र प्रदेश राजपत्र दिनांक 9 जनवरी, 1958 में प्रकाशित किया गया था, और इसे 10 जनवरी, 1958 से लागू होने का निर्देश दिया गया था। इसके बाद आंध्र प्रदेश सड़क परिवहन निगम, जिसका गठन, सड़क परिवहन निगम अधिनियम, 1950 के प्रावधानों के अधीन किया गया था ने उपक्रम को अपने हाथ में ले लिया और एक चरणबद्ध कार्यक्रम के तहत योजना को लागू करने के लिए आगे बढ़े। अपीलार्थियों ने संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत विभिन्न आधारों पर उक्त योजना को निरस्त करने के लिए इस न्यायालय का रुख किया। इस न्यायालय ने अपीलकर्ताओं द्वारा उठाई गई अधिकांश आपत्तियों को खारिज कर दिया, सिवाय प्रभारी परिवहन विभाग द्वारा की गई दो संबधित सुनवाई के संबंध में जिसके परिणामस्वरूप योजना को मंजूरी देने वाले सरकार के आदेश को रद्द कर दिया गया और उसे उन किसी भी मार्ग पर कब्जा करने से रोकने का निर्देश दिया गया जिन पर अपीलार्थी परिवहन व्यवसाय में लगे हुए थे। उक्त आदेश के बाद, सरकार द्वारा सभी आपत्तिकर्ताओं को नोटिस जारी किए गए थे जिसमें उन्हें सूचित किया गया था कि मुख्यमंत्री द्वारा 9 दिसंबर, 1958 को एक व्यक्तिगत सुनवाई की जाएगी और उन्हें आगे सूचित किया गया कि वे 30 नवंबर, 1958 से पहले आगे की आपत्तियां दायर करने के लिए स्वतंत्र हैं। मुख्यमंत्री ने आपत्ति करने वालों और निगम के प्रतिनिधियों को सुना और 19 दिसंबर, 1958 को आदेश पारित किए, जिसमें दायर आपत्तियों को खारिज कर दिया गया और मूल रूप से प्रकाशित योजना को मंजूरी दी गई। योजना को मंजूरी देने वाला आदेश सरकार द्वारा 22 दिसंबर, 1958 को आधिकारिक राजपत्र में विधिवत प्रकाशित किया गया था। 23 दिसंबर, 1958 को निगम ने स्टेज कैरिज चलाने के लिए परमिट जारी करने और निजी बस ऑपरेटरों को दिए गए परमिट को समाप्त करने के लिए सड़क परिवहन प्राधिकरण को आवेदन किया। 24 दिसंबर, 1958 को, उक्त प्राधिकरण ने 24 दिसंबर, 1958 से

अपीलकर्ताओं के परमिट को अप्रभावी बनाने के आदेश पारित किए, और निगम को पहले अपील लेंट द्वारा संचालित मार्गों के संबंध में परमिट भी जारी किए। उक्त आदेशों को 24 दिसंबर, 1958 को अपीलार्थियों को सूचित किया गया था और उन्हें 25 दिसंबर, 1958 से अपने-अपने मार्गों पर अपनी बसें नहीं चलाने का भी निर्देश दिया गया था। अपीलार्थी, जो सरकार के आदेशों के साथ-साथ क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण के आदेश से व्यथित थे, उसी को निरस्त करने के लिए उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय में याचिकाएं दायर कीं।

याचिकाओं की सुनवाई चंद्र रेड्डी, सी. जे. और श्रीनिवासचारी, जे. से मिलकर बनी उच्च् न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा की गई थी जिसने अपीलार्थियों द्वारा उठाई गई दलीलों को नकार दिया और याचिकाओं को खारिज कर दिया। इसलिए ये अपीलें की गई।

अपीलार्थियों के विद्वान वकील श्री चटर्जी की दलीलों को संक्षिप्त में इस प्रकार दिया जा सकता हैः (1) इस न्यायालय ने गुल्लापल्ली नागेश्वर राव बनाम आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम में अभिनिर्धारित किया है (1), कि परिवहन विभाग के प्रभारी सचिव को इस सिद्धांत के आधार पर विभाग और निजी बस ऑपरेटरों के बीच विवाद का फैसला करने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया गया था कि कोई पक्ष अपने स्वयं के मामले में न्यायाधीश नहीं हो सकता है, और जैसा कि मुख्यमंत्री परिवहन विभाग का प्रभारी था, वही दुर्बलता जो उससे जुड़ी हुई है, और इसलिए उपक्रम द्वारा प्रकाशित योजना पर आपत्तियों की सुनवाई करने से उसे अयोग्य घोषित किया जाना चाहिए; और (2) मुख्यमंत्री अपने कार्यों से, जैसे कि योजना की शुरुआत करना, और भाषणों से एक स्पष्ट पूर्वाग्रह उपक्रम के पक्ष में व निजी बस चालकों के विरूद्घ दिखाई देता है, इसलिए प्राकृतिक न्याय के सिददांत के आधार पर इस न्यायालय द्वारा स्वीकृत किया गया कि उसे पक्षकारों के मध्य विवाद को निर्धारित करने से रोका गया।

विद्वान महाधिवक्ता ने किसी प्राधिकरण के "आधिकारिक पूर्वाग्रह" के बीच अंतर करने की कोशिश की जो उस पर लगाए गए वैधानिक कर्तव्य और उक्त प्राधिकरण के "व्यक्तिगत पूर्वाग्रह" के पक्षकारों के पक्ष में या उसके विराेध में, के बीच अंतर करने की कोशिश की और केवल तथ्य यह है कि सरकार के मुख्यमंत्री राष्ट्रीयकरण की नीति का समर्थन किया था, या यहाँ तक कि इस तथ्य का कि सरकार ने उक्त योजना की शुरुआत की थी, उन्हें विवाद का फैसला करने से तब तक अयोग्य नहीं ठहराया जब तक कि यह स्थापित नहीं हो जाता कि वह व्यक्तिगत पूर्वाग्रह का दोषी था, और यह कि उक्त तथ्य को स्थापित करने के लिए कोई कानूनी सबूत नहीं था।

इस स्तर पर "पूर्वाग्रह के सिद्धांत" को नियंत्रित करने वाले प्रासंगिक सिद्धांतों का खुलासा करने वाले बार में उद्धृत निर्णयों को संक्षेप में ध्यान देना सुविधाजनक होगा। न्यायिक न्यायाधिकरणों के सामने "पूर्वाग्रह के सिद्धांत" सुलझे हुए है; और वह हैः (1) कोई भी व्यक्ति अपने स्वयं के मामलें में न्यायाधिश नही होगाः (2) न्याय केवल किया ही नही जाना चाहिए बल्कि किया गया प्रतित भी होना चाहिए। दो सिद्धांत परिणाम देते है कि यदि एक न्यायिक निकाय का सदस्य पक्षपात के अधीन है (चाहे वितिय या अन्य) या विवाद के पक्षकार के पक्ष में या विरूद्घ है। या फिर से इस स्थिति में है कि एक पक्षपात का अस्तित्व में मान लिया जाना चाहिए, उसे फैसले में हिस्सा नही लेना चाहिए या अधिकरण में नही बैठना चाहिए और यह कि किसी प्रत्यक्ष आर्थिक हित, चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो। जाँच का विषय हे जो एक न्यायाधीश को अयोग्य घोषित कर देगा, और किसी भी हित जाे, यद्यपि आर्थिक नहीं, समान प्रभाव होगा, यदि वह पक्षपात का एक कारण योग्य संदेह पैदा करने के लिए पर्याप्त होगा। उक्त सिद्धांत अधिकारियों पर समान रूप से लागू होते हैं, हालांकि वे न्याय की अदालतें या न्यायिक न्यायाधिकरण नहीं हैं, जिन्हें दूसरों के अधिकारों को तय करने में न्यायिक सहयोगी का काम करना पड़ता है, यानी ऐसे अधिकारी जो अर्ध-

न्यायिक कार्यों का निर्वहन करने के लिए सशक्त हैं। उक्त सिद्धांतों को दोनों पक्षों के विद्वान वकील द्वारा स्वीकार किया जाता है; लेकिन इस मामले में उठाया गया सवाल यह है कि क्या, जब कोई क़ानून किसी प्राधिकरण को अपने स्वयं के कारण का न्यायाधीश होने की शक्ति प्रदान करता है या उस विवाद का निर्णय करने का दायित्व अधिरोपित करता है जिसमें लिए जिसमें उसका आधिकारिक पूर्वाग्रह है, तो क्या उक्त कानूनी अधिकार पक्षपात का सिद्धांत की सीमा तक योग्य है। द किंग बनाम बाथ क्षतिपूर्ति प्राधिकरण (1) एक काउंटी नगर के लाइसेंस देने वाले न्यायाधीशों ने एक होटल के लाइसेंस के नवीनीकरण के लिए आवेदन को नगर के मुआवजा प्राधिकारी को भेजा और यह भी तय किया कि एक सॉलिसिटर को निर्देश दिया जाना चाहिए कि वह क्षतिपूर्ति प्राधिकरण के समक्ष पेश हों और इसके नवीनीकरण का विरोध करें। सॉलिसिटर प्राधिकरण के समक्ष उपस्थित हुए और विपक्ष का समर्थन किया, और परिणामस्वरूप मुआवजे के भुगतान के विषय के अधीन नवीनीकरण से इनकार कर दिया। यह उल्लेख किया जा सकता है कि क्षतिपूर्ति न्यायाधिकरण में बैठने वाले और लाइसेंस के नवीनीकरण के खिलाफ मतदान करने वाले अधिकांश न्यायाधीश लाइसेंस समिति के सदस्यों के रूप में क्षतिपूर्ति प्राधिकरण को नवीनीकरण के प्रश्न को संदर्भित करने वाले संकल्प के पक्षकार थे। बहुमत से अपील न्यायालय, एटकिन, एल. जे. ने असहमति जताते हुए कहा कि अनुज्ञप्ति अधिनियम, 1910 के प्रावधानों को देखते हुए, उस मामले के तथ्यों से ऐसे पूर्वाग्रह या पूर्वाग्रह की संभावना का खुलासा नहीं होता है जो उन्हें न्यायाधिकरण में बैठने से अयोग्य ठहराए। यह निर्णय हाउस ऑफ लॉर्ड्स द्वारा अपील में उलट दिया गया था (1926 ए. सी. 586 में सूचित)। हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायाधिकरण का निर्णय, जिस पर तीन न्यायाधीशों ने मामले को उक्त प्राधिकरण को भेजा था, को इस आधार पर दरकिनार कर दिया

जाना चाहिए कि कोई भी एक ही मामले में पक्षकार और न्यायाधीश दोनों नहीं हो सकता है।

विस्काउंट गुफा, एल. सी., में वैधानिक कर्तव्य के आधार पर तर्क मिलता है जो पी. 592 पर है:

> " इसमें कोई संदेह नहीं है कि क़ानून क्षतिपुर्ति प्राधिकरण के समक्ष उपस्थित होने वाले अनुज्ञप्ति न्यायाधीशों और इस तर्क में भाग लेने की इस संभावना पर विचार करता है ; इसके लिए धारा 19 की उपधारा 2 द्वारा प्रदान किया गया है कि क्षतिपूर्ति प्राधिकरण किसी भी व्यक्ति को, जो उसके समक्ष अनुज्ञप्ति नवीनीकरण के पश्न में हित रखता है "जिसमें अनुज्ञप्ति न्यायाधीश भी शामिल है।" सुनवाई का एक अवसर लेकिन कानून कहीं नहीं कहता है कि न्यायाधीश जो विपक्ष के रूप में उपस्थित होने के लिए चुने गए है। और सक्रिय हो जाते हैं (जैसा कि एक वकील को निर्देश देना) अपने विपक्ष को प्रभावी बनाने के लिए, फिर भी विवाद में न्यायाधीशों के रूप में कार्य कर सकते है; और एक स्पष्ट प्रावधान के अभाव में उस प्रभाव के लिए मुझे लगता है कि सामान्य नियम, कि कोई भी एक ही मामले में पक्षकार और न्यायाधीश दोनों नहीं हो सकता है, अच्छा रहता है। "

इसलिए, यह निर्णय उस समर्थक स्थिति के लिए एक प्राधिकार है, जब तक कि विधायिका स्पष्ट और अभिव्यक्त रूप से इसके विपरित निर्धारित नही करती तबतक प्राकृतिक न्याय के सिद्घांत का उलंगन नही हो सकता। द किंग बनाम लीसेसटर जस्टिस के वाद अनुज्ञप्ति (समेकन) अधिनियम, 1910, के अधीन मामला उत्पन्न हुआ

जिसमे किंग की न्यायपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि केवल तथ्य यह है कि लाइसेंस न्यायाधीश ने एक आपत्ति उत्पन्न की है कि लाइसेंस के नवीनीकरण से वह उस लाइसेंस के मामले में उस प्राधिकरण के सदस्य के रूप में बैठने और निर्णय लेने के लिए हित रखने के कारण अयोग्य नहीं है। साल्टर, जे. द्वारा बाथ जस्टिस के मामले व उनके समक्ष के मामले में अंतर को निम्नलिखित शब्दों में सामने लाया गया। पी. 565:

" अंतर यह है कि उस मामले में संसद ने जो किया गया था उसे मंजूरी नहीं दी थी; इस मामले मे दी है "।

इस तर्क से निपटते हुए कि यदि वैधानिक कर्तव्य का निर्वहन किया जाता है तो पक्षपात का कुछ जोखिम था, विद्वान न्यायाधीश ने इसे इस टिप्पणी के साथ खारिज कर दिया कि "पक्षपात का कुछ जोखिम संसद द्वारा स्थापित तंत्र से अविभाज्य है।" पहली नजर में ही ऐसा लगता है कि निर्णय बाथ जस्टिस केस (1) में हाउस ऑफ लॉर्ड्स द्वारा पारीत निर्णय से असंगत प्रतीत होता है। लेकिन बाद के मामले की जांच से पता चलता है कि उस मामले में लाइसेंस देने वाले न्यायाधीशों ने स्वयं मुआवजे प्राधिकरण के समक्ष लाइसेंस के नवीनीकरण का सक्रिय रूप से विरोध किया था और अपनी ओर से एक वकील को ऐसा करने का निर्देश दिया था। यह कानून द्वारा उन पर डाला गया कर्तव्य नहीं है, जबकि अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए आवेदन से निपटने में अनुज्ञप्ति न्यायाधीश और जब नवीकरण का प्रश्न क्षतिपूर्ति प्राधिकरण को निर्णय के लिए भेजा गया था, तो उस प्राधिकरण के सदस्यों के रूप में बैठने में केवल विधायिका द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार कर्तव्यों का पालन करना है। यह फैसला दर्शाता है कि इंग्लैंड में पक्षपात के आधार पर सामान्य कानून की आपत्ति का वैधानिक आक्रमण सहिष्णु है। लेकिन आक्रमण सख्ती से वैधानिक अपवाद की सीमाओं तक ही सीमित है। यह ध्यान देने योग्य नहीं है कि इंग्लैंड में संसद सर्वोच्च है और इसलिए

कोई कानून प्राकृतिक न्याय के सिद्घात के प्रतिकुल हो तो भी एक वैधानिक कानून है, हालांकि भारत में संसद व राज्य विधानमंडल द्वारा बनाए गए कानूनों को संविधान के भाग III में घोषित मौलिक अधिकार के परिक्षण पर खरा उतरना चाहिए।

तत्काल मामले में संबंधित अधिनियम के प्रावधान प्राकृतिक न्याय के किसी भी सिद्घांत की अवहेलना को मंजूरी नहीं देता है। अधिनियम के तहत एक वैधानिक प्राधिकारी जिसे परिवहन उपक्रम कहा है, बनाया गया व इसे निर्दिष्ट वैधानिक कार्य प्रदान किए जाते हैं।यह कि उपक्रम सड़क परिवहन सेवा के लिए एक योजना तैयार करता है जो जिस क्षेत्र के संबंध में उक्त् उपक्रम द्वारा चलाई या संचालित है। कोई भी व्यक्ति जों योजना से प्रभावित है उसे राज्य सरकार के समक्ष आपत्ति दायर करना आवश्यक है और राज्य सरकार आपत्तियाँ और अभ्यावेदन प्राप्त करने के बाद, आपत्ति करने वालों को साथ ही उपक्रम को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर देता है और जैसा कि मामला हो सकता है योजना को अनुमोदित या संशोधित करता है। अधिनियम के प्रावधान इसलिए सरकार को योजना शुरू करने और अपने ही मामले में न्यायाधीश बनने हेतु अधीकृत नही करतें। अधिनियम की पूरी योजना की कल्पना की जाती है, उपक्रम और निजी बसों के संचालकों के बीच संघर्ष की स्थिति में, कि राज्य सरकार को निर्णय में बैठना चाहिए और संघर्ष को हल करना चाहिए। इसलिए यह अधिनियम राज्य सरकार को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अपमान करने के लिए कार्य करने के लिए अधिकृत नहीं करता है।

अगला सवाल यह है कि क्या राज्य सरकार ने वर्तमान मामले में उक्त सिद्धांतों का उल्लंघन किया है। यह तर्क कि जैसा कि इस न्यायालय ने इस मुकदमे के पिछले स्तर पर कहा था कि परिवहन विभाग के प्रभारी सचिव द्वारा दी गई सुनवाई ने प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को आहत किया, हमें उसी के तार्किक परिणाम के रूप में मानना चाहिए, कि वही दुर्बलता मुख्यमंत्री से जुड़ी होगी। इस तर्क को दो

आधारों पर खारिज किया जाना चाहिएः सबसे पहले, इस कारण से कि पिछले अवसर पर अपीलकर्ताओं ने योजना पर आपत्तियों पर निर्णय लेने के मुख्यमंत्री के अधिकार पर सवाल नहीं उठाया, और वास्तव में उन्होंने ऐसा करने के लिए उनके निस्संदेह अधिकार को ग्रहण किया, लेकिन उनके आदेश की वैधता का इस आधार पर प्रचार किया कि सचिव, जो परिवहन विभाग का हिस्सा थे, ने सुनवाई की, न कि मुख्यमंत्री ने, और इसलिए, विवाद के एक पक्ष को उनके स्वयं के कारण का न्यायाधीश बनाया गया। यदि, जैसा कि अब यह तर्क दिया जाता है, उसी तर्क पर मुख्यमंत्री को भी विवाद का फैसला करने के लिए अयोग्य ठहराया जाता, तो उस बिंदु को उस स्तर पर उठाया जाना चाहिए थाः इसके बजाय, एक विभाग के सचिव और मुख्यमंत्री के बीच अंतर किया गया और इसके आधार पर मुख्यमंत्री के आदेश की वैधता पर सवाल उठाया गया। इस अदालत ने इस तर्क को स्वीकार कर लिया। उस पर इस न्यायालय का निर्णय प्राप्त करने के बाद इस स्तर पर, यह अपीलार्थियों के लिए बंद विवाद को फिर से खोलने और एक विपरीत स्थिति लेने के लिए अवसर खुला नही हो सकता। इसके अलावा, इस विवाद में कोई गुण नहीं हैं। विभाग के सचिव और राज्य के मुख्यमंत्री के पद के बीच स्पष्ट अंतर है। संविधान के तहत, राज्यपाल को मुख्यमंत्री की अध्यक्षता वाले मंत्रियों की सलाह पर कार्य करने का निर्देश दिया जाता है। संविधान के अनुच्छेद 166 के खण्ड 2 और 3 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में मद्रास के राज्यपाल ने "द मद्रास गवर्नमेंट बिजनेस" नियम बनाए और नियम 9 उपबंद करता है कि बिना नियम 7 के पुर्वाग्रह के विभाग का प्रभारी मंत्री मुख्य रूप से उस विभाग से संबंधित व्यवसाय के निपटान के लिए जिम्मेदार होगा। आंध्र के राज्यपाल ने संविधान के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए निर्देश दिया कि जब तक इस संबंध में अन्य प्रावधान नहीं किए जाते, तब तक आंध्र सरकार का कार्य उक्त नियमों के अनुसार किया जाएगा। इसलिए, यह स्पष्ट है कि संविधान और उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत एक विभाग का

प्रभारी मंत्री मुख्य रूप से उस विभाग से संबंधित व्यवसाय के निपटारे के लिए जिम्मेदार होता है, लेकिन सलाह देने की अंतिम जिम्मेदारी पूरे मंत्रालय पर होती है। लेकिन एक विभाग के सचिव की स्थिति अलग है। उक्त नियमों के तहत, किसी विभाग का सचिव उसका प्रमुख होता है अर्थात वह इसका हिस्सा होता है। एक सचिव और एक मंत्री के कार्यों के बीच एक आवश्यक अंतर है; पहला विभाग का एक हिस्सा है और दूसरा केवल प्रारंभिक रूप से उस विभाग से संबंधित व्यवसाय के निपटान के लिए जिम्मेदार है। इस भेद पर इस न्यायालय का पिछला निर्णय आधारित था, क्योंकि उस मामले में, उस विभाग में सचिव की स्थिति को इंगित करने के बाद, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "हालांकि औपचारिक आदेश मुख्यमंत्री द्वारा दिए गए थे, वास्तव में और सार में, जांच की गई थी और विवाद के हर एक पक्षकार की व्यक्तिगत सुनवाई की गई थी"। विद्वान वकील का यह तर्क है कि मुख्यमंत्री अधिनियम के तहत एक

वैधानिक उपक्रम के रूप में गठित विभाग का हिस्सा है, हम इसे स्वीकार नहीं कर सकते।

अगला सवाल यह है कि क्या मुख्यमंत्री द्वारा क्या मुख्यमंत्री द्वारा उनके कृत्यों और भाषणों ने विवाद में निर्णय लेने से राज्य सरकार के कार्यों के लिये खुद को अयोग्य घोषित कर दिया। अपीलार्थियों में से एक नागेश्वर राव द्वारा उच्च न्यायालय में दायर रिट याचिकाओं के संबंध में न्यायालय में दायर अपने हलफनामे के पैराग्राफ (14) के आधार (8) में इस प्रकार कहता हैः

" वह (मुख्यमंत्री) परिवहन विभाग का प्रभारी मंत्री हैं, जिसके इशारे पर योजना को पहली बार अधिनियम की धारा 68 सी के तहत प्रकाशित किया गया था। वह न केवल इस योजना के आरंभकर्ता है, बल्कि वह व्यक्ति भी जो इसके अनुमोदन व कार्यान्वयन में रुचि रखता है। इस प्रकार उनके पास एक पक्ष होने के नाते विवाद से

प्रत्यक्ष और विशिष्ट संबंध है और जब वह व्यक्तिगत सुनवाई करता है और आपत्तियों पर विचार करता है, वह अपने मामले में एक न्यायाधीश के रूप में कार्य करेगा।

श्री चटर्जी का तर्क है कि आधार (8) में सन्निहित इस आरोप का जवाब देने से खंडन नहीं किया गया है। यह कहना सही नहीं है कि इन आरोपों को चुनौती नहीं दी गई, क्योंकि राज्य की ओर से दायर जवाबी हलफनामे के पैराग्राफ 6 में, हम निम्नलिखित कथन पाते हैं।

" याचिकाकर्ता के शपथ पत्र के पैरा 14 में की गयी दलीलें आधारहीन है। सरकार द्वारा अनुमोदित योजना न तो अवैध है और न ही अधिकार क्षेत्र के बिना।"

> पैराग्राफ 6 के उप-पैराग्राफ (3) में यह आरोप लगाया गया है कि "आरोप है कि विवाद्यक की सुनवाई और निर्धारण कानून या न्यायिक प्रक्रिया के सिद्धांतों के अनुरूप नहीं है, लेकिन केवल सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश को संतुष्ट करने के लिये एक प्रहसन चलाना, सही नहीं है।"

पैराग्राफ 6 के उप-पैराग्राफ (7) में लिखा हैः

> "प्रभारी मंत्री अर्थात मुख्यमंत्री सुन सकते हैं और निर्णय ले सकते हैं। राज्य सरकार का स्वयं वाद कारण में रुचि नहीं मानी जा सकती और इसलिए निर्णय लेने के लिए अयोग्य थी।"

उक्त पैराग्राफ के उप-पैराग्राफ (8) में कहा गया हैः

"यह तर्क कि मुख्यमंत्री सुनवाई करने और आपत्तियों पर विचार करने के लिए सक्षम नहीं है क्योंकि वह पक्षपाती है और वह विवाद्यक से पूर्वाग्राही है अच्छी तरह से स्थापित नहीं है। तथ्यों के बारे में 9-12-1958 को वहां, कोई सडक परिवहन विभाग नहीं था, बल्कि सडक परिवहन निगम जो कि पूर्ण रूप से स्वायत निकाय है, का मुख्य

मंत्री से कोई मतलब नहीं है। अतः जांच की दिनांक को निगम एक पूरी तरह से स्वायत्त निकाय होने के नाते पूरी तरह से स्वतंत्र निकाय था इसलिए वहाँ आपत्तिकर्ता को सुनवाई में मुख्यमंत्री के पक्षपाती होने का प्रश्न उत्पन्न नहीं हो सकता है। मुख्यमंत्री द्वारा दी गई सुनवाई वरिष्ठ न्यायालय द्वारा रिमांड के बाद कानून की अदालत की सुनवाई की तरह है। आरोप है कि मुख्यमंत्री ने अपना दिमाग बंद कर लिया था और वह पक्षपाती था बिल्कुल आधारहीन है। उन्होंने अपना दिमाग खुला रखा और सभी आपत्तियों पर पूरी तरह से विचार किया।

जवाबी हलफनामे में आगे विस्तार से बताया गया है कि कैसे गुरु प्रसाद द्वारा योजना की शुरुआत की गई थी और कैसे अधिनियम के प्रावधानों के अनुपालन में विभिन्न कदम उठाए गए थे। अतः यह स्पष्ट है कि सरकार ने अपीलार्थियों द्वारा अपने शपथपत्रों में लगाए गए आरोपों को स्वीकार नहीं किया। बस परिवहन के राष्ट्रीयकरण के मामले में सरकार की नीति चाहे जो भी हो, यह नहीं कहा जा सकता कि मुख्यमंत्री ने इस प्रश्नगत योजना की शुरुआत की थी। विद्वान वकील ने तब समाचार पत्रों में प्रकाशित रिपोर्टों के कुछ उद्धरणों पर भरोसा किया जो मुख्यमंत्री के भाषण होने का दावा करते थे। प्रदर्श IV, 14 अक्टूबर, 1957 को दिए गए मुख्यमंत्री के भाषण का सारांश कहा जाता है और इसके प्रासंगिक भाग में लिखा हैः

> "कृष्णा जिले के प्रति मेरा कोई पूर्वाग्रह नहीं है। तेलंगाना में बस परिवहन 25 साल पहले से राष्ट्रीयकृत था। बस परिवहन राष्ट्रीयकरण का विस्तार कृष्णा जिले तक किया गया, क्योंकि यह परिवहन सेवाऔ के संबंध में तेलंगाना से जुडा हुआ है। धीरे-धीरे इसका विस्तार दूसरे जिले तक किया जाएगा। सभी जिलों में राष्ट्रीयकरण शुरू करने के लिए बारह करोड रूप्यों की जरूरत है। सरकार इस बात से अवगत है कि राष्ट्र बस परिवहन का एकीकरण

लाभदायक नहीं है। लेकिन हम अन्य राज्यों के अनुरूप होना चाहिए और समय के साथ आगे बढ़ना चाहिए। कृष्णा जिले में 360 बसें हैं। मैं यह आश्वासन नहीं दे सकता कि इन सभी को अपने कब्जे में ले लिया जावे। यह खेद की बात है कि जब जनहित में ऐसा किया जा रहा है तो इसकी घोर आलोचना की जानी चाहिये।"

यह भाषण केवल सरकार की नीति को दर्शाता है। प्रदर्श 5 को इंडियन एक्सप्रेस की 18 अक्टूबर, 1957 की रिपोर्ट का एक उद्धरण कहा जाता है। इसका भौतिक भाग इस प्रकार हैः

"आंध्र क्षेत्र में सड़क परिवहन सेवाओं का राष्ट्रीयकरण एक तय तथ्य था और इस पर पीछे हटने का कोई सवाल ही नहीं है।"

यह भाषण केवल सरकार की नीति को बताता है और इसमें कृष्णा जिले या उस जिले में परिवहन सेवाओं का कोई संदर्भ नहीं है। प्रदर्श VI दिनांक 25 अक्टूबर, 1957 की द हिंदू की रिपोर्ट का एक उद्धरण है, जिसमें यह आरोप लगाया गया है कि मुख्यमंत्री ने निम्नलिखित बयान दिया हैः

"मुख्यमंत्री श्री एन. संजीव रेड्डी ने आज यहाँ कहा कि कृष्णा जिले में राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन का संचालन एक निगम द्वारा किया जाएगा।

मुख्यमंत्री, जो एक प्रेस को संबोधित कर रहे थे ने कहा उस जिले में बस परिवहन का राष्ट्रीयकरण करने का निर्णय स्थगित करने का कोई प्रश्न ही नहीं है। मुख्यमंत्री ने दृढता से कहा कि निजी बस संचालकों का तर्क है कि वहाँ राष्ट्रीयकरण नहीं होना चाहिए, को जनता का कोई समर्थन नहीं है।

यह भाषण कृष्णा जिले में बस परिवहन के राष्ट्रीयकरण का सीधा संदर्भ देता है और मुख्यमंत्री की ओर से इसे आगे स्थगित नहीं करने का दृढ़ संकल्प होने का संकेत

देता है। प्रदर्श में 13 दिसंबर, 1957 की इंडियन एक्सप्रेस की रिपोर्ट का एक उद्धरण है और इसमें लिखा हैः

"आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री संजीव रेड्डी ने आज यहां संवाददाताओं से कहा कि राज्य सरकार एक अप्रेल से कृष्णा जिले में परिवहन के राष्ट्रीयकरण का विस्तार करने के अपने निर्णय के कार्यान्वयन के साथ आगे बढेगी।

यह एक विशेष तिथि से कृष्णा जिले में बस परिवहन के राष्ट्रीयकरण की योजना को लागू करने के लिए मुख्यमंत्री के दृढ़ संकल्प का भी संकेत देता है। प्रदर्श X, 1 अप्रैल, 1958 की तारीख के तहत मेल में एक रिपोर्ट है, जिसे राज्य सड़क द्वारा गुंटूर और कृष्णा जिलों के लिए राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन सेवाओं के विस्तार के पहले चरण का उद्घाटन करते हुए मुख्यमंत्री द्वारा दिया गया भाषण माना जाता है। भाषण के प्रासंगिक उद्धरण इस प्रकार हैंः

"उन्होंने (मुख्यमंत्री) पहले इस योजना को सरल बनाया गया, लेकिन उन्होंने खेद व्यक्त किया कि यह मुश्किल है क्योंकि बस ऑपरेटरों ने रिट याचिकाएं दायर की हैं। उच्च न्यायालय में, एक 'भारी शोर' उठाया और विरोध किया और अंत में उन्हें बचाने के लिए कांग्रेस अध्यक्ष श्री यू. एन. ढेबर से संपर्क किया।

श्री संजीव रेड्डी ने पुष्टि की कि सरकार सभी विपक्षियों के खिलाफ बस परिवहन सेवाओं के राष्ट्रीयकरण को लागू करने के लिये दृढसंकल्प थी और स्वर्गीय टी. प्रकाशम द्वारा प्रशिक्षित उनके जैसे व्यक्ति कभी भी विरोध से नहीं डरते थे।

यदि यह स्थापित किया गया था कि मुख्यमंत्री ने प्रदर्श VI, IX और X में निकाले गए भाषणों को बनाया था तो अपीलार्थी के वकील के तर्क में काफी तर्क होता, लेकिन इस बात को साबित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि मुख्यमंत्री ने वास्तव में उन भाषणों को व्यक्त किया। यह सच है कि समाचार पत्रों के निष्कर्ष

मुख्यमंत्री के समक्ष दाखिल किए गए थे और उन्हें प्रमाण के अधीन प्राप्त किया गया था, लेकिन ऐसा कोई व्यक्ति जिसने मुख्यमंत्री को ऐसा कहते सुना था उनके समक्ष उसने हलफनामा दायर नहीं किया।

मुख्यमंत्री ने यह स्वीकार नहीं किया कि जिस बयान के लिये उन्हें जिम्मेदार बाया है वह उन्होंने दिए थे। योजना को मंजूरी देते हुए मुख्यमंत्री ने आदेशों में कहा हैः

"जहाँ तक कागज की कटिंग का संबंध है, मैं उल्लेख कर सकता हूँ कि एक लंबे और विविध राजनीतिक करियर के दौरान मैंने कई अवसरों पर सैकड़ों बयान दिए हैं। और कई मेरे विषुद्घ रूप से व्यक्तिगत राय हो सकते हैं इतना ही नहीं हमेशा यह नहीं होता है कि प्रेस के लोग प्रकाशित होने से पहले दिये गये बयानों की सटीकता पर व्यक्तियों से परामर्श करे। मेरे समक्ष दायर की गयी प्रेस कटिंग सरकार की मंजूरी से सरकार द्वारा जारी की गयी विज्ञप्तयां नहीं हैं। वे विभिन्न मौके पर मेरे द्वारा किये गये कई बयानों के रिकार्ड प्रकाशित किये जाते हैं। यह सामान्य ज्ञान प्रेस कटिंग है, जहां और वहां, संदर्भ से बाहर कटे हुये, एक आदमी के वास्तविक इरादों की एक पूर्ण परिवर्तित तस्वीर और संस्करण देंगे। अलग-अलग समय पर मेरे द्वारा कहे गये इन बयानों की सत्यता के बारे में निश्चित रूप से कोई बात बताना मेरे लिये संभव नहीं है। यह काफी संभव है कि मैंने कई ऐसे बयान कई अवसरों पर किये होंगे, और यह भी काफी संभव है, कि कुछ बिंदु यहां और वहां बोले गये हो सकते हैं, जो कागजों में हैड लायीन के साथ प्रकाशित किये गये हों। न्यायिक जांच में कानूनी सबूत के रूप में कई मौकों पर किये गये बयानों के पेपर कटिंग का इलाज संभव नहीं है और न ही वांछनीय है।

इस तथ्य के बावजूद कि मुख्यमंत्री ने समाचार पत्रों में उनके द्वारा दिए गए बयानों की शुद्धता को स्वीकार नहीं किया, अपीलकर्ताओं द्वारा उच्च न्यायालय में

कोई हलफनामा दायर करने का कोई प्रयास नहीं किया गया, जिसकी शपथ उन व्यक्तियों ने ली थी जिन्होंने मुख्यमंत्री द्वारा संपादित बैठक के संबोधन में भाग लिया था और उन्हें ऐसा करते हुए सुना था।

इन परिस्थितियों में, यह माना जाना चाहिए कि अपीलकर्ताओं द्वारा यह स्थापित नहीं किया गया है कि मुख्यमंत्री ने कृष्णा जिले में बस परिवहन के राष्ट्रीयकरण के विषय पर अपने बंद दिमाग का संकेत देते हुए भाषण दिए थे। यदि इन समाचार पत्र कटिंग को साक्ष्य से बाहर रखा जाता है, तो अपीलार्थियों के तर्क का तथ्यात्मक आधार गायब हो जाता है। हम, सबसे पहले, मानते हैं कि मुख्यमंत्री को राष्ट्रीयकरण की योजना के खिलाफ आपत्तियों को सुनने के लिए अयोग्य नहीं ठहराया गया था।

आंध्र प्रदेश मोटर वाहन नियम के नियम 11 के आधार पर एक सहायक तर्क पेश किया जाता है। यह तर्क दिया गया कि सड़क परिवहन प्राधिकरण ने एक आदेश दिया जिसमें कहा गया है कि अपीलार्थियों के परमिट उस नियम द्वारा आवश्यक उचित सूचना दिए बिना अप्रभावी हैं और इसलिए उक्त आदेश अमान्य है। उक्त नियमों के नियम 11 में कहा गया हैः

"अनुमोदित योजना को प्रभावी बनाने के लिए, क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण या प्राधिकरणों को मौजूदा सेवाओं को समाप्त करने से पहले या किसी भी मौजूदा परमिट को रद्द करना या संशोधित करना मौजूदा परमिट की शर्तों को संशोधित करने के पहले मंजूरी दी जायेगी इसलिये-

(i) परमिट को एक विशिष्टता ति से परे अप्रभावी बनाना।

(ii) एक परमिट के तहत उपयोग किये जाने वाले अधिकृत वाहनों की संख्या को कम करना।

(iii) परमिट में सम्मिलित किये गये क्षेत्र या मार्ग को सीमित करें। जहाँ तक ऐसी अनुमति अधिसूचित मार्ग से संबंधित हैः

इन नियमों में निर्धारित तरीके से प्रभावित होने की संभावना वाले व्यक्तियों को उचित सूचना दें।

इस नियम को धारा 68 - एफ, की उपधारा 2 के साथ पढना होगा,

"अनुमोदित योजना को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से अधिसूचित क्षेत्र या अधिसूचित मार्ग के संबंध में क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण, द्वारा आदेश दिया जा सकेगा,

(क) किसी भी अन्य परमिट का नवीनीकरण के लिए किसी भी आवेदन को स्वीकार करने से इनकार करनाः

(ख) किसी भी मौजूदा परमिट को रद्द कर दें;

(ग) किसी भी मौजूदा परमिट की शर्तों में संशोधन करना ताकि -

(i) परमिट को एक विशिष्टता तिथि से परे अप्रभावी बनाना।

(ii) परमिट के तहत उपयोग किया जाना वाले अधिकृत वाहनों की संख्या को कम करना।

(iii) इसके अंतर्गत आने वाले क्षेत्र या मार्ग को कम करें।

जहां तक इस तरह के परमिट में परमिट अधिसूचित क्षेत्र या मार्ग से संबंधित है।

धारा 68 एफ (2) और नियम 11 के संयुक्त पठन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त आदेश से प्रभावित होने की संभावना वाले व्यक्तियों को उचित नोटिस देने के बाद ही क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण द्वारा उक्त उपधारा के तहत विचारित आदेश दिया

जा सकता है। 24 दिसम्बर 1958 को क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण ने निम्नलिखित आदेश दियाः

मोटर वाहन अधिनयम 1939 की धारा 68 एफ (2) (सी) (आई) के तहत (1956 के अधिनियम 100 द्वारा संशोधित) के संबंध में राष्ट्रीयकरण की अनुमाेदित योजना काे प्रभावी करने के उद्देश्य से निम्नलिखित अधिसूचित मार्गों में से 24 दिसम्बर 1958 के बाद निम्नलिखित बसों के परमिट अप्रभावी किये गये हैं।

जिन मार्गों पर अपीलार्थी काम कर रहे थे, आदेश में उल्लिखित मार्गों में उनकी बसें भी शामिल की गई थीं। 24 दिसंबर, 1958 को क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण ने संचालकों को एक आदेश जारी कर निर्देश दिया कि वे 25 दिसंबर, 1958 से संबंधित मार्गों पर अपनी बसों को मार्गों पर नहीं चलाये और वह आदेश अपीलार्थियों को उसी दिन यानी 24 दिसंबर, 1958 को दिया गया था। यद्यपि विद्वान महाधिवक्ता, ने सुझाव दिया कि नियम 11 के प्रावधान को संतुष्ट किया है, लेकिन हमें उनके विवाद को स्वीकार करना असंभव लगता है। क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकारी द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया में दो दोष हैं-

(i) जबकि नियम प्राधिकरण को संबंधित आदेश देने से पहले प्रभावित व्यक्तियों को नोटिस जारी करने का आदेश देता है, प्राधिकरण ने आदेश दिया और उसी को व्यक्तियों को संप्रेषित किया; और (ii) जबकि नियम प्रभावित व्यक्तियों को उचित सूचना देने की अपेक्षा करता है, ताकि वे पारित किए जाने वाले प्रस्तावित आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन करने में सक्षम हो सकें, क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण ने उन्हें उस आदेश का पालन करने के लिए केवल एक दिन दिया, जिसे परिस्थितियों में नियम के अर्थ के भीतर उचित सूचना नहीं माना जा सकता था। इसलिए, हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण ने सख्ती से ऐसा नहीं किया, लेकिन

पर्यवेक्षण परिस्थितियों को देखते हुए, उच्च न्यायालय ने क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया में इस दोष को देखते हुए, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इनकार कर दिया। क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण के आदेश के अनुसार अपीलकर्ताओं ने संबंधित मार्गों से अपने वाहन वापस ले लिए और सड़क परिवहन निगम के वाहन उन मार्गों पर चल रहे हैं। इस न्यायालय के निर्णय ने उत्तरदाताओं के पक्ष में उठाए गए सभी प्रश्नों का निर्णय लिया, और क्या क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण के आदेश को दरकिनार कर दिया गया और अपीलार्थियों को अपना प्रतिनिधि बनाने का एक और अवसर दिया गया। उस प्राधिकरण को भेजे जाने पर, जैसा कि उच्च न्यायालय कहता है, यह केवल एक खाली औपचारिकता होगी। चूँकि उनके वाहन पहले ही मार्गों से वापस ले लिए गए हैं और निगम के वाहनों द्वारा प्रतिस्थापित किए गए हैं, ऐसे किसी भी आदेश का प्रभाव न केवल अपीलार्थी के लिए किसी भी तरह की मदद का होगा, बल्कि अनावश्यक अनुपालन और टालने योग्य भ्रम पैदा करेगा। इन परिस्थितियों में, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि चूंकि अपीलकर्ता पूरी तरह से विफल रहे हैं, इसलिए बिना किसी व्यावहारिक उपयोगिता के तकनीकी बिंदु पर हस्तक्षेप करना "ऊँट को निगलने का एक खरगोश पर दबाव डालना" है। इसलिए हम यह नहीं कह सकते कि उच्च न्यायालय ने इस मामले में अपने विवेक का सही उपयोग नहीं किया। अपील विफल हो जाती है और परिस्थितियों में बिना किसी शुल्क के खारिज कर दी जाती है।

याचिकाएं खारिज कर दी गईं।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी तापस सोनी आर जे एस द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।